International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 20-09-2020; Accepted: 05-10-2020; Published: 21-10-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 116-118

स्त्री चिंतन का वैचारिक आधार: थेरीगाथा

कुमारी सीमा
बी.एन.एम.यू, मधेपुरा, बिहार, भारत

सारांश
थेरियों ने स्त्री होने की जिस पीड़ा का अनुभव किया बौद्ध दर्शन के प्रभाव में आकर उसे अपनी वाणियों में अभिव्यक्त किया है। वर्तमान स्त्री चिंतन के केंद्र में नारी-मुक्ति के जो प्रश्न हैं उनका वैचारिक आधार थेरियों की वाणियों (गाथा) में देखा और सुना जा सकता है। इस आलेख में उन सूत्रों को रेखांकित करने की कोशिश की गई है, जिसके सहारे वर्तमान स्त्री चिंतन थेरीगाथा से जुड़ता है।

मूल शब्द: बौद्ध, थेरियों, बौद्ध, दर्शन, थेरीगाथा

प्रस्तावना

ऋग्वैदिक काल की सामाजिक-व्यवस्था वैदिक काल तक आते-आते संकीर्ण होने लगी थी। इस काल में वैदिक-ब्राह्मण-पुरोहित वर्ग का समाज पर प्रभुत्व बढ़ने लगा था और समाज में रचनात्मक सोच और सुकार्य के बजाए विनाशात्मक एवं विघटनात्मक सोच और कार्य का महत्त्व बढ़ने लगा। 'वैदिक काल में वैदिक ब्राह्मण-पुरोहित वर्ग अपने को सम्प्रभुत्व संपन्न बनाने के लिए समाज में धार्मिक, याज्ञिक और कर्मकाण्डात्मक कार्यों को स्थापित करने में जुटा हुआ था।'[1] घोर कर्मकाण्ड से जुड़ा दर्शन समाज के विकास में बाधा उत्पन्न कर रहा था। डॉ. सुमन राजे ने इस ओर इशारा करते हुए लिखा है कि 'कोई सामाजिक आवश्यकता थी, जिसे पुराने सिद्धांत पूरा नहीं कर पा रहे थे। एक नई चुनौती समाज के सामने थी।'[2] यही कारण भी है कि नए-नए दर्शन एवं संप्रदायों का विकास इस समय हुआ। प्रो. एस. डी. कपूर के अनुसार "हर समाज के इतिहास में ऐसे अवसर आते हैं जब वहाँ नए विचारों का उदय होता है और वे स्थापित विचारों को चुनौती देते हैं। यह चुनौती लगातार मिलती रहे तो वह एक आन्दोलन का रूप ले लेता है। निरन्तरता के बिना वह व्यापक असर नहीं डाल पाता। वह एक विचार प्रणाली का हिस्सा तभी बन सकता है जब एक सशक्त आन्दोलन का रूप ले और पुरानी विचार प्रणाली को बदले।"[3] रेमण्ड विलियम ने Culture and Society में इसे नए युग की शुरुआत के रूप में देखा है।

भारत के इतिहास में ई.पू. छठी-पांचवीं सदी में एक नए भारत का, एक नए युग का प्रारंभ होता है। वैदिक काल की तमाम ब्राह्मणवादी मान्यताओं, कर्मकाण्डों और यज्ञों को चुनौती देते हुए महात्मा बुद्ध अपने क्रांतिकारी धम्म और दर्शन के साथ उपस्थित होते हैं। उनके इस नए जीवन दर्शन से 'तात्कालिक भारतीय समाज, सर्वमान्य जन, मेहनतकश, शोषित समाज सचेत और आंदोलित हुआ।'[4] 'बुद्ध की इस वैचारिक, धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक क्रांति ने भारतीय जनमानस को इस तरह से प्रभावित किया, इस तरह आंदोलित किया कि एक नई कला का, एक नई कला-चेतना का, एक नई सृजनशीलता का जन्म हुआ।'[5] इस नई सृजनशीलता की उपज ही थेर-थेरीगाथा है। जिसे डॉ. सुमन राजे ने प्रथम भारतीय नवजागरण से जोड़कर स्पष्ट किया है कि "थेरी गाथाओं का संबंध भारतीय प्रथम नवजागरण से है।"[6] उन्होंने नवजागरण की धारणा को भी स्पष्ट किया है कि 'नवजागरण मूलतः मानव की वह प्रतिगामी चेतना है, जो काल के अंतराल से विस्फोट करती है और जिसके परिणाम स्वरूप इतिहास के एक युग से दूसरे युग में एक छलांग परिलक्षित होती है। इसका संबंध मात्र धर्म, राजनीति, विज्ञान अथवा कला के इतिहास से नहीं वरन् उस मानवीय चेतना से है जिससे इन सबकी रचना संभव होती है।'[7] उन्होंने नवजागरण को और स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'नवजागरण की भावना में मानव-आत्मा की स्वतंत्रता प्राप्ति की आकुल उत्कंठा ही उसे एक नए सृजन के लिए प्रेरित करती है।'[8] आज की स्त्री भी इसी स्वतंत्रता प्राप्ति की आकुल उत्कंठा से प्रेरित होकर सृजनरत है और अपने इतिहास-निर्माण की प्रक्रिया में संलग्न है।

स्त्री अस्मिता की पहचान और थेरीगाथा

बुद्ध ने अपने दर्शन के प्रचार के लिए उस समय की लोक भाषा 'पालि' को चुना। एक तरफ दर्शन बदला, दर्शन की भाषा बदली और भाषा के बदलने से साहित्य भी बदला। डॉ. सुमन राजे ने इस ओर ध्यान केन्द्रित करते हुए लिखा है कि 'दर्शन का केंद्र बदलने से साहित्य का केंद्र भी परिवर्तित हो गया।'[9] साहित्य के लिए लोकभाषा की अनुमति मिली तो लोक ने अपना दुःख-दर्द कह दिया। थेरीगाथा इसी लोक स्त्री के जीवनानुभव की अभिव्यक्ति है। डॉ. सुमन राजे के अनुसार 'भारतीय प्रथम नवजागरण में लोकशक्ति अपनी पूर्ण प्रखरता एवं सौन्दर्य-शक्ति के साथ प्रतिबिम्बित हुई है।'[10] आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि 'भारतीय हृदय का सामान्य स्वरूप पहचानने के लिए पुराने प्रचलित ग्रामगीतों की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।'[11] इसी भारतीय हृदय की पहचान के लिए डॉ. सुमन राजे पालि लोक साहित्य की ओर ध्यान देती हैं। एक तरफ लोकगीतों में भारतीय हृदय की पहचान होती है तो दूसरी ओर लोकगीत अपनी भी पहचान बनाए रखते हैं। डॉ. सुमन राजे के अनुसार, "थेरी गाथाओं की अपनी पहचान है और यह पहचान अनेकमुखी है। सबसे पहली पहचान स्त्री होने की है, जो उनकी रचनाओं को थेरगाथाओं से अलगाती है।"[12] यह अलगाव कई स्तर पर है।

थेरगाथाएँ प्रकृति-सौन्दर्य में रची बसी हैं, जबकि थेरी गाथाएँ अपने भीतर की यात्राएं हैं, जिसमें उनकी पूर्व स्मृतियाँ भी जुड़ी हैं।[13] दूसरा अंतर आत्म अभिव्यंजना का है। डॉ. सुमन राजे ने भी इस अंतर को रेखांकित किया है; "थेरीगाथा की पहचान थेरियों की आत्म अभिव्यंजना को लेकर है जबकि थेरगाथा में आत्माभिव्यक्ति के अंश कम हैं और उथले हैं।"[14] डॉ. भरत सिंह उपाध्याय का इस सन्दर्भ में कहना है कि 'अत्यंत संगीतात्मक भाषा में, आत्माभिव्यंजनात्मक गीतिकाव्य की शैली के आधार पर अपने जीवनानुभवों को व्यक्त करते हुए यहाँ बौद्ध भिक्षुणियों ने अपने जीवन-काव्य को गाया है। नैतिक सच्चाई, भावनाओं की गहनता और सबसे बढ़कर एक अपराजित वैयक्तिक ध्वनि इन गीतों की मुख्य विशेषताएँ हैं।'[15] वैयक्तिक ध्वनि के ये गीत थेरीगाथाओं और महादेवी के काव्य को एक सूत्र से जोड़ते हैं। प्रसिद्ध जापानी विदुषी तोमको किकुचि ने लिखा है कि 'महादेवी की कृतियों और थेरीगाथा के बीच आश्चर्यजनक समानता पाई जाती है। थेरीगाथा उन भिक्षुणियों की गाथाएँ हैं जिन्होंने सांसारिक विडम्बनाओं एवं प्रताड़नाओं का प्रत्यक्ष अनुभव करने के बाद बुद्ध की करुणा का प्रेरणात्मक अनुभव किया है।...दूसरी ओर महादेवी ने संस्मरणों के रूप में नारियों की व्यथा का अंकन किया है और नारी जाति के प्रतिनिधित्व रूप में अपनी पीड़ा काव्य जगत को अर्पित की हैं।'[16] थेरीगाथा में थेरियों का 'मैं' अपने निज दुःख को अभिव्यक्त करता है परन्तु यह 'मैं' व्यष्टि से समष्टि की तरफ गमन करता है; क्योंकि 'उनके स्त्री के गीत में जब 'मैं' बोलता है तो यह 'मैं' सम्पूर्ण स्त्री का प्रतिनिधत्व करता है।'[17] महादेवी का 'मैं' भी स्त्री जाति का प्रतिनिधित्व करता है। दोनों के काव्य में अंतर केवल इतना है कि महादेवी के काव्य में दुःख ही आरंभ है और अंत भी। जबकि थेरियों के काव्य में दुःख केवल अतीत की स्मृतियाँ हैं, जबकि वर्तमान दुःखरहित है। डॉ. सुमन राजे ने लिखा है; "शमित राग होने पर भी मानवीय दुःख उनकी गाथाओं में अतीत की गंध लेकर आते हैं। उसके तुरंत बाद ही, वर्तमान की शोकरहित स्थिति का चित्रण है। इस तरह ये गाथाएँ एक गहरे 'कंट्रास्ट' का सृजन करती है, राग से वैराग्य, शोक से करुणा की ओर प्रस्थान करती है।"[18] सुमंगलामाता के इस काव्य में यह गुण स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है--

'अहो ! मैं मुक्त नारी। मेरी मुक्ति कितनी धन्य है !
पहले मैं मूसल लेकर धान कूटा करती थी,
आज उससे मुक्त हुई !
मेरी दरिद्रावस्था के वे छोटे-छोटे बर्तन !
जिनके बीच मैं मैली-कुचैली बैठती थी,
और मेरा निर्लज पति मुझे उन छातों से भी तुच्छ समझता था
जिन्हें वह अपनी जीविका के लिए बनाता था।'19

स्त्री के इसी मुक्ति के रूप में डॉ. सुमन राजे ने नवजागरण को चिन्हित करते हुए लिखा है कि 'नवजागरण की भावना मानव-आत्मा की स्वतंत्रता प्राप्ति की आकुल उत्कंठा ही उसे एक नए सृजन के लिए प्रेरित करती है।'[20] मुक्ति का यह स्वर मुक्ता (थेरी) के काव्य में भी सुनाई देता है--

'मैं सुमुक्त हो गयी ! अच्छी विमुक्त हो गयी ! तीन टेढ़ी
चीजों से मैं भली विमुक्त हो गयी।
ओखली से, मुसल से और अपने कुबड़े स्वामी से
मैं अच्छी मुक्त हो गयी।'[21]

सुमंगला व मुक्ता की यह मुक्ति अपने पति से है, उस पारिवारिक सत्ता से है। पति के प्रति यह क्षोभ सिर्फ दरिद्र स्त्रियों को ही नहीं है, बल्कि कुलीन स्त्रियों को भी है। ऋषिदासी उज्जैनी की कुलीन वैश्य परिवार की कन्या थी। माता-पिता ने उसका विवाह एक योग्य वर से कर दिया। सर्वगुणसंपन्ना होने के बाद भी वह पति को पसंद नहीं आयी, अतः घर से निकल दी गयी।[22]

प्राचीन काल से ही स्त्री की प्रज्ञा को कम आँकने का प्रयास किया गया है। 'पुरुष दर्शन स्त्री पर आरोप लगता रहा है कि जो स्थान ऋषियों के द्वारा भी प्राप्त करने में अत्यंत कठिन है, उसे दो अंगुली मात्र प्रज्ञा वाली स्त्री प्राप्त कर लेगी, यह कभी संभव नहीं।'[23] दो अंगुली प्रज्ञा से अभिप्राय घरेलू स्त्री की प्रज्ञा से जोड़कर देखा गया है। ऋग्वेद में इंद्राणी स्त्रियों को संबोधित कर कहा है कि 'प्रतिज्ञा करो कि जो-जो पराक्रम और कर्तृत्व दिखाकर पुरुष कीर्तिमान् हुआ, कृतकृत्य हुआ और सर्वत्र उत्तम सिद्ध हुआ, वह सबकुछ आप कर दिखाएंगी।'[24] भिक्षुणी सोमा ने तो पुरुषों के इस आरोप का उत्तर देते हुए कहा है-

'जब चित्त अच्छी तरह समाधि में
स्थित है, ज्ञान नित्य विद्यमान है
अंतर्ज्ञान पूर्वक धर्म का सम्यक् दर्शन कर लिया गया है
तो स्त्रीत्व इसमें हमारा क्या करेगा?'[25]

ज्ञान का यह रूप ही स्त्री को स्त्रीत्व के बोझ से मुक्त करता है। दूसरी तरफ स्त्री प्रज्ञा का एक अनुपम उदाहरण दिखता है, जो ब्राह्मण धर्म के पूरे पाखंड को एवं कर्मकांड को चुनौती देता है-

'यदि जल से ही शुद्धि होती
तब तो मेंढक, कछुए, जल के सर्प, मगर और अन्य
जलचरों का स्वर्गगमन निश्चित है !
यदि इस नदी में नहाने से पूर्व के पाप-कर्म
धुल जाते हैं,
तो क्या उनके साथ ही तेरे पुण्य-कर्म भी
न धुल जाएंगे?
ब्राह्मण फिर तेरे पास क्या रहेगा?'[26]

कर्म कर्मकांड का यह विरोध कबीर से साक्षात्कार करा देता है। जब कबीर कहते हैं कि 'जो तू बांभन बांभनी जाया, तो आन बाट कहे नहीं आया।'

'वैदिक ऋचाओं की तुलना में थेरी गाथाओं की रचना सर्वथा पृथक भूमिका में है। यह अंतर केवल भाषाओं का नहीं है, भिन्न सामाजिक स्तरों, वर्गों और विचार-सरणियों का है।'[27] संभवतः कुछ को छोड़कर प्रायः वैदिक ऋषिकाएँ ऋषिकुल की हैं। जबकि थेरियों में अलग-अलग वर्ग, जाति एवं वर्ण की स्त्रियाँ हैं। और ये थेरियाँ अपनी पहचान छिपाती नहीं हैं। डॉ. सुमन राजे लिखती हैं कि 'स्त्री-छाप होने के साथ ही, थेरी गाथाओं पर वर्गगत चरित्रों की भी छाप है। मुख्य बात यह है कि यह छाप उनके जीवन पर ही नहीं, अभिव्यक्ति पर भी है।'[28] पूर्णिका भिक्षुणी और ब्राह्मण विवाद की स्मृति में पूर्णिका की पहचान उभरकर सामने आती है।

'मैं पनिहारिन थी
सदा पानी भरना ही मेरा काम था
स्वामिनियों के दण्ड के भय से
उनके क्रोध-भरे कुवाक्यों से पीड़ित होकर
मुझे कड़ी सर्दी में भी सदा पानी में उतरना पड़ता था।'[29]

थेरीगाथा में सिर्फ एक पनिहारिन ही अपनी पहचान नहीं बताती, बल्कि गणिकाएँ भी अपनी पहचान नहीं छिपती हैं। अड्ढकासी, अभयमाता, विमला तथा अम्बपाली थेरियाँ भी अपने काव्य में गणिका होने का संकेत देती हैं। इन थेरियों ने अपने गणिका-जीवन का बारीकी से चित्रण किया है।

'रूप-लावण्य, सौभाग्य और यश से मतवाली हुई
यौवन के अहंकार में मस्त, मैं अज्ञानी अपने को कितना
गौरवमयी समझती थी।
गहनों से शरीर को विभूषित और चित्रित किए हुए
मैं उसे अनेक तरुणों से बातचीत का माध्यम बनाती थी
वेश्या-गृह के द्वार पर सतर्क दृष्टि से बैठी हुई मैं
व्याध के समान जालों को फैलाती थी ।।
लज्जा और शर्म को छोड़कर मैं अपने आभूषणों को उघाड़
कर दिखाती थी और गुह्य-अंग तक दिखा देती थी ।
मनुष्यों के पतन के लिए मैं अनेक मायाएं रचती थी ।।[30]

जैसे ही इन गणिकाओं को नश्वर शरीर व सांसारिक जीवन के सत्य का ज्ञान हुआ तो वह कह उठती हैं कि 'वही सब सौन्दर्य आज मेरे लिए घृणा का/ कारण हुआ/ ग्लानी पैदा करने वाला हुआ।'[31] इसलिए उनका मानना है कि--

'सत्यवादी (बुद्ध) के वचन कभी मिथ्या नहीं होते'[32]

थेरीगाथा की विशेषता यह है कि स्त्री अपनी पीड़ा की पहचान कर लेती है। जिसे संसार नैतिकता एवं प्रेम से जोड़कर स्त्री के लिए श्रेष्ठ बताता है, उस संतानोत्पत्ति की पीड़ा का सच भी उन्हें पता है। इसलिए वे कहती हैं कि –

'स्त्री होना दुःख है।
बच्चों को (तीव्र पीड़ा में) जनना दुःख है।
कोई-कोई जननेवाली माताएं एक बार ही मृत्यु चाहती हुई
अपना गला काट लेती हैं, ताकि दुबारा यह दुःख न सहना
पड़े !'[33]

निष्कर्ष

वर्तमान स्त्री लेखन में स्त्री मुक्ति की जो छटपटाहट हमें दिखती है वह आज एकाएक नहीं उभरकर आई है, बल्कि स्त्री-दमन के इतिहास में झाँकने पर सहज ही दिखता है कि हर युग की स्त्री को जब भी अवसर प्राप्त हुआ है उसने अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति की है और उस जड़ समाज के प्रति अपना विरोध प्रदर्शन भी किया है। थेरीगाथा इसी अभिव्यक्ति और प्रतिरोध की निर्मिती है। थेरीगाथा में मुक्ति की यह आकुल उत्कंठा ही उनके काव्य-सृजन की प्रेरणा है और उनका काव्य आज के स्त्री-चिंतन की प्रेरणा है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. विमलकीर्ति; भगवान बुद्ध का प्रेरणादायी जीवन, पृ. 51
2. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ. 88
3. https://epgp.inflibnet.ac.in/epgpdata/uploads/epgp_content/S000018HI/P001296/M008071/ET/1579933477HND_P16_M1AADHUNIKATAAURSAMKALEENTAKASAMBANDH.pdf
4. डॉ. विमलकीर्ति; भगवान बुद्ध का प्रेरणादायी जीवन, पृ. 51
5. वही, पृ. 51
6. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ. 87
7. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ. 87
8. वही, पृ. 87
9. वही, पृ. 88
10. वही, पृ. 88
11. रामचन्द्र शुक्ल; हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 423
12. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ. 89
13. वही, पृ. 90
14. वही, पृ. 90
15. भरत सिंह उपाध्याय; थेरीगाथा, पृ. 18
16. तोमको किकुचि; महादेवी की विश्वदृष्टि, पृ. 151
17. वही, पृ. 151
18. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ. 101
19. वही, पृ.99
20. वही, पृ.87
21. वही, पृ. 98
22. वही, पृ.93
23. वही, पृ. 100 पर उद्दृत
24. मधुकर अस्तिकर; वैदिककालीन स्त्रियाँ, पृ. 23
25. सुमन राजे; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, पृ 100
26. वही, पृ. 98
27. वही, पृ. 100
28. वही, पृ. 94
29. वही, पृ. 98
30. वही, पृ. 95
31. वही, पृ. 94
32. वही, पृ. 95
33. वही, पृ. 99-100